प्रकाशक : **अमृत मेहता**
4283/3, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली-110 002

मुख्य संपादक : **अमृत मेहता**

प्रकाशन अवधि : त्रैमासिक
मूल्य : 20 रुपये (एक प्रति)
80 रुपये (वार्षिक)

मुद्रक :
राजा ऑफसेट प्रिंटर्स
1/51, ललिता पार्क, लक्ष्मी नगर,
विकास मार्ग, दिल्ली-110 092

किसी भी विवाद के लिए न्याय क्षेत्र हैदराबाद होगा।

Edited & Published by
AMRIT MEHTA
at
4283/3, Ansari Road,
Darya Gunj, New Delhi-110002

Contact Address:

Dr. AMRIT MEHTA
2-99, Kakatiya Nagar, Habsiguda,
Hyderabad-500 007

सार-संसार

विदेशी भाषा साहित्य की त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

वर्ष : 11 **पूर्णांक : 42** **अप्रैल-जून, 2006 ई.** **अंक : 2**

चीनी कविता विशेषांक

मुख्य संपादक
अमृत मेहता

इस अंक के अनुवादक
देवेंद्र सिंह रावत
चीनी और दक्षिण-पूर्वी एशियाई अध्ययन केंद्र
भाषा, साहित्य एवं संस्कृति संस्थान
1470, पूर्वांचल, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नयी दिल्ली-110 067

हमारी वेबसाइट :
www.saarsansaar.com
Email : literature@saarsansaar.com

मूल्य :
एक प्रति : 20 रुपये
वार्षिक : 80 रुपये

Subscription :
Single Copy : Rs.20.00
Annual : Rs.80.00

अनुक्रम

सं. नाम

स्विस लेखक **मर्टिन आर. डीन से एक भेंटवार्ता** ...

1) **क्व मो र्व** ... ...
देवियों का पुनर्जन्म
मृत्यु का प्रलोभन
मानस दीप
स्वर्ग श्वान
वसुंधरा, मेरी माँ!
ज्योति का सागर

2) **शू थिङ** ... ...
आइरिस का फूल-गाता है गीत जो

3) **याङ मु** ... ...
मुझे गर्व है कि मेरे पास एक दूरस्थ क्षितिज है
(अपनी दूसरी जन्म भूमि चुन् का अर के लिए)

4) **चौ ति फ़ान** ... ...
काला सागर के गीत

5) **चाङ् ख च्या** ... ...
ओह! श्याङ याङ् झील—
मैं तुम्हें तहे दिल से प्यार करता हूँ।

6) **पत्रिका समीक्षा** ... ...
सद्भावना दर्पण का तेलुगु विशेषांक
-**आर. चंद्रशेखर,** हैदराबाद

अतिथि संपादक के दो शब्द...

चीनी साहित्य का यह विशेषांक बीसवीं सदी की साहित्यिक यात्रा पर निकले एक भटके पथिक की असफल कोशिश का प्रतिफल है। रास्ता बहुत लंबा और दुर्गम। लेकिन पहल तो करनी थी और प्रयास भी।

इस संदर्भ में 1919 एंव 1999 के मध्य एक अस्थायी सेतु स्थापित करने के प्रयास में बहुत कुछ छूटा लेकिन जो पाया और संजोया वह पाठकों के सामने है। अस्थायी सेतु के मध्य खड़े होकर मुझे बहुत बड़ी रिक्तता का एहसास हो रहा है। इस बात का मुझे खेद है।

विशेषांक में सम्मिलित लेखक हैं— क्व मो र्व, शू थिङ, चौ ति फ़ान, यांङ् मु और चांङ् ख च्या। यहाँ पर यह रेखांकित करना आवश्यक समझता हूँ कि क्व मो र्व और लाओ श के अलावा अन्य सभी लेखकों की रचनाओं का रचनाकाल 1976 के बाद का है।

क्व मो र्व (1892-1978) आधुनिक चीनी साहित्य में नयी कविता के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। 'देवियाँ' उनका पहला काव्य संकलन है जो कि पहली बार 1921 में प्रकाशित हुआ।

शू थिङ् समकालीन चीनी कविता की सर्वाधिक चर्चित वरिष्ठ कवयित्री हैं। यांङ् मु और चौ ति फ़ान का भी कविता जगत में अपना विशेष स्थान है।

आशा है पाठकों को यह अंक पसंद आयेगा।

-देवेंद्र सिंह रावत

स्विस लेखक मार्टिन आर. डीन से एक भेंटवार्ता

मार्टिन आर. डीन का जन्म 17 जुलाई, 1955 को मेंत्सीकेन (स्विटज़रलैंड) में हुआ था। वर्तमान निवास स्थान बाज़ल। एक से चार वर्ष की आयु तक ट्रिनीडाड में बड़े हुए। प्राथमिक शिक्षा मेंत्सीकेन तथा आराऊ में। स्कूली शिक्षा पूर्ण होने के बाद अनेक विदेश यात्राएँ, वेस्टइंडीज़, पुर्तगाल, इटली तथा ग्रीस का भ्रमण। दक्षिण फ्रांस में दीर्घकालीन प्रवास, पेरिस की नियमित यात्राएँ। बाज़ल यूनिवर्सिटी में जर्मन विद्या, दर्शनशास्त्र तथा मानवजाति-विज्ञान का अध्ययन। तत्पश्चात बाज़ल में लेखक, पत्रकार तथा निबंधकार के रूप में जीवनयापन।

मार्टिन आर. डीन

मैं जानता था कि मार्टिन आर. डीन स्विटज़रलैंड के प्रतिष्ठित लेखकों में से हैं, कई संग्रहों में मैंने उनके लेख और कहानियाँ पढ़ रखे थे। मैं यह भी जानता था कि 2002 में वह भारत यात्रा पर आये थे, लेकिन यह नहीं जानता था कि उनके भारत से आत्मीय संबंध भी हैं। गत वर्ष मेरे स्विटज़रलैंड प्रवास के दौरान जब भी मैं ज़्यूरिख़ में होता था तो वहाँ हिर्शनग्राबेन पर स्थित स्विस कला परिषद् के मुख्यालय प्रोहेल्वोत्सिया ज़रूर जाता था। वहाँ कार्यरत डेनीसे पेल्लोत्सी से मेरा परिचय 13 वर्ष पुराना था। वह रहती बाज़ल नगर में हैं, जो ज़्यूरिख़ से रेल द्वारा 2 घंटे की दूरी पर है। मैं भी काफ़ी दिन बाज़ल के उपनगर राइनाख़ में अपने मित्र रूडोल्फ़ पाइयर के यहाँ टिका था। डेनीसे ने मुझसे पूछा कि क्या बाज़ल में मेरी भेंट मार्टिन आर. डीन से हुई है, जिस पर मैंने कहा कि मैं नहीं जानता था कि वह बाज़ल में रहते हैं। डेनीसे ने सुझाव दिया कि मैं उनसे अवश्य मिलूँ, बड़े अच्छे लेखक हैं और बेहतर इन्सान हैं। मुझसे मिल कर वह ज़रूर ख़ुश होंगे। मैंने बाज़ल से रूडोल्फ़ के घर से उन्हें फ़ोन किया तो उन्होंने फ़ौरन मिलने की इच्छा प्रकट की। उन्होंने फ़ोन पर मुझसे पूछा कि क्या मैं उनके भारत से रिश्ते के बारे में जानता हूँ। मेरे न कहने पर उन्होंने बताया कि उनके पिता भारतीय थे और माँ स्विस थी, और उनका आज का नाम 'डीन' वास्तव में उनके मध्य नाम 'दीन' का बदला हुआ स्विसीकृत रूप है। काफ़ी दिलचस्प बात थी। उनसे अगले दिन सुबह नाश्ते पर मिलने का समय तय हुआ, और उनसे हुए वार्तालाप के अंश इस प्रकार हैं :

अमृत मेहता : अपने भारत से संबंध के बारे में आप हमारे पाठकों को विस्तार से बतायेंगे?

मार्टिन डीन. : मेरे पिता ट्रिनीडाड से हैं। सर वी.एस. नायपाल से हमारा दूर का संबंध है। मेरी माँ की भेंट पिता से लंदन में हुई थी। माँ स्विस हैं, जर्मनभाषी हैं, और उनका जन्म मेंकीत्सीकेन में हुआ था। पिता ने ट्रिनीडाड में माँ को तलाक़ दे दिया था, फिर मेरी माँ ने एक और हिंदुस्तानी से शादी कर ली थी, जिसका नाम था दीनानाथ दीन (जिससे मेरा नाम डीन बन गया है)- पिता की मृत्यु 8 वर्ष पूर्व हुई है, माँ अभी भी हैं। तो आठ साल पहले मैंने अपने असली पिता को खोज निकालने की कोशिशें शुरू कीं, उनपर सूचनाएँ एकत्र कीं, और अंतत: मैंने उन्हें लंदन में खोज निकाला। फिर मैं पिता के नये परिवार से भी मिला। फिर मैं अपनी जड़ें ढूँढना चाहता था, जो मुझे उत्तर प्रदरेश लेकर आयीं, सुल्तानपुर ज़िले में मोजोवा गाँव में। मेरे पिता के परदादा बल्कि लकड़दादा ने 1867 में कलकत्ता से ट्रिनीडाड जाने के लिए 'फ़ोयते' नाम का पोत लिया था। गत बार जब 2002 में मैं भारत आया था तो बड़ोदा, मुंबई तथा बंगलोर में रहा था।

अ.मे. : मुझे बड़ी प्रसन्नता होती है यह देख कर कि आधे भारतीय होते हुए भी आपको यहाँ इतनी ख्याति मिली है।

मा.डी. : लेकिन यह इतना आसान नहीं है। समय के साथ-साथ युगचेतना ज़्यादा से

ज़्यादा नस्लवादी और नाज़ीवादी होती जा रही है। मेरे बहुत मित्र हैं, मगर उनमें से कइयों को यह पसंद नहीं है कि मुझे इतनी सफलता मिली है। अच्छी बात यह है कि मुझे जर्मनी में एक बहुत अच्छा प्रकाशक मिला हुआ है। जर्मनी में मेरी पुस्तकें बहुत बिकती हैं।

अ.मे. : आपकी बेटी ख़ुद को कैसा महसूस करती है, स्विस या भारतीय?

(उनकी स्विस पत्नी और लगभग 8 साल की बेटी वहीं बैठी थीं।)

मा.डी. : मेरी बेटी एक चौथाई भारतीय है। यह भारतीय बनना चाहती है।

अ.मे. : और आप?

मा.डी. : मैंने स्वयं को सदा भारतीय महसूस किया है। दो-तीन पहचान हैं मेरी। स्विस, ट्रिनीडाडी और भारतीय। परंतु अपने चेहरे से मैं भारतीय ही लगता हूँ। कुछ लोग मुझे तुर्की, मेक्सिको, सिसिली या पाकिस्तान से भी सफझ लेते हैं।

अ.मे. : आप के पिता तो हिंदू थे। आप किस धर्म से संबंध रखते हैं?

मा.डी. : मैं ईसाई के रूप में पला बड़ा हूँ। प्रोटेस्टँट। मैंने दर्शनशास्त्र की, राजनैतिक दर्शन की उच्च शिक्षा पायी है। मार्कूज़े और वाल्टर बेंजामिन से प्रभावित हूँ। मुझे धर्म के दर्शन में कम रुचि है। मैं वामपंथी हूँ, समाजवादी हूँ।

अ.मे. : किन लेखकों से आप प्रभावित हुए हैं?

मा.डी. : बहुत समय से मैं नोबोकू से प्रभावित हूँ। पसंद बदलती रहती है, ख़ुआन कार्लोस ओनेत्ती उरुग्वे से, फ़िलिप रोट, विक्रम सेठ, सलमान रुशदी मेरे मनपसंद लेखक हैं।

अ.मे. : क्या आपके विचार से विक्रम सेठ और रुशदी भारत को अपने पाठकों के सामने वैसे ही प्रस्तुत करते हैं जैसे भारतीय लेखक?

मा.डी. : कह नहीं सकता। मैंने भारतीय फ़िल्में देखी हैं, सत्यजीत राय की भी और बॉलीवुड की भी। मुझे बॉलीवुड की फ़िल्में मूर्खता भरी लगती हैं। मैं नहीं जानता कि क्या वे भारतीय लोकाचार या मानसिकता प्रस्तुत करती हैं।

अ.मे. : और भारत के बारे में आप क्या कहेंगे?

मा.डी. : जिन लोगों को मैं जानता हूँ, वे बुद्धू नहीं है। विषादप्रवण हैं, और भी बहुत कुछ। लेकिन भारतीय स्त्रियाँ बहुत ख़ूबसूरत हैं, इतनी ख़ूबसूरत कि यक़ीन नहीं आता। वहाँ मैं लोगों के मैत्रीपूर्ण व्यवहार और स्पष्टवादिता से भी बहुत प्रभावित हुआ हूँ। एक बार बंगलौर से मैसूर के 4 घंटे के सफ़र के दौरान मैंने बहुत से मित्र बना लिये थे। बहुत बातें हुईं उनसे। भारत में मेरे मन में कभी कहीं कोई डर की भावना नहीं रही, मैंने कभी कोई ख़तरा महसूस नहीं किया।

अ.मे. : मगर आप का पाला तो सिर्फ़ बुद्धिजीवियों से ही पड़ा होगा?

मा.डी. : नहीं ऐसी बात नहीं है। और लोगों से भी मेरी भेंट हुई है। औरतें घर छोड़ कर बाहर नहीं निकलतीं, क्योंकि तब माता-पिता के लिए खाना कौन पकायेगा। यह कोई छोटी बात नहीं है। भारत में हर इंसान अपने परिवार के सदस्यों, बच्चों, माता-पिता इत्यादि के लिए कोई न कोई बलिदान देता है। चाहे वह औरत हो या मर्द।

अ.मे. : स्विटज़रलैंड द्वारा शेंगन देशों के समूह की सदस्यता ग्रहण करने के बारे में आपका क्या विचार है?

मा.डी. : मैं इसके पक्ष में हूँ। मैंने कई बार इटली, फ्रांस, जर्मनी जैसे देशों का भ्रमण किया है, और मुझे यों महसूस हुआ है मानो हम यहाँ स्विटज़रलैंड में जैसे किसी द्वीप पर रह रहे हैं। इससे बेरोज़गारी की समस्या उत्पन्न हो सकती है, परंतु तब पूँजी-निवेश अधिक होगा। बिज़नेस बढ़ सकेगा।

अ.मे. : आपने लेखन कब आरंभ किया?

मा.डी. : बहुत जल्दी ही मैंने लिखना शुरू कर दिया था। मेरी पहली पुस्तक तब प्रकाशित हुई थी, जब मैं 25 वर्ष का था। अपनी अस्मिता को अपने लेखन के माध्यम से अभिव्यक्ति देना मेरे लिए बहुत महत्व रखता है। मेरे भीतर तीन संस्कृतियाँ जी रही हैं। मेरी नानी जर्मन थी। वह 1919 में यहाँ बावर्चिन बन कर आयी थी। तीन संस्कृतियों का मिश्रण होने पर व्यक्ति को अपनी अस्मिता को स्वयं एक रूप देना होता है। लेखन तो एक संयोगात्मक प्रक्रिया है। मुझे स्वयं अपने आप को गढ़ना है। लेखक के रूप में मुझे इन संस्कृतियों के

मध्य खाई को भरना है। मैं वो कहानियाँ सुनाता हूँ, जो इन अंतरालों से संबंध रखती हैं, और पाठक इन अंतरालों को पार करते हैं।

अ.मे. : संस्कृतियों की इन दूरियों को तय करने के लिए आपने कितनी दूरियाँ तय की हैं?

मा.डी. : बहुत दूरियाँ तय की हैं, बहुत यात्राएँ की हैं। मैं अपनी पहचान ढूँढ रहा था। बहुत बेचैन था। जबसे मुझे मेरे पिता मिल गये हैं, मुझे चैन मिल गया है। यह रिक्ति भरी गयी है।

अ.मे. : पिता के मिल जाने से आपको अपनी वंशावली जानने की भी उत्सुकता रही होगी?

मा.डी. : हाँ। हम उपाध्याय ब्राह्मण थे। दादी उत्तर प्रदेश से थी और दादा मद्रास से।

अ.मे. : भूमंडलीकरण के बारे में आपकी क्या राय है?

मा.डी. : यह एक सुअवसर है। मैं इसका विरोधी नहीं हूँ। इससे सीमाएँ ख़त्म होंगी। राष्ट्रों का जन्म एक ऐतिहासिक भूल थी। नयी समस्याएँ केवल वैश्विक स्तर पर ही सुलझाई जा सकती हैं। राष्ट्र अपने आप में एक नकारात्मक धारणा है। विश्व की अर्थव्यवस्था न्यायोचित नहीं है। राष्ट्रों में असमानताएँ मिटाना ही न्यायोचित है। इसके लिए संवाद आवश्यक है। लंदन ने कभी दिल्ली पर राज किया था, परंतु आज उनमें बोलचाल बंद नहीं है, संवाद जारी रहना चाहिए। सकारात्मक पक्षों को सामने लाना है। बेज़ा हालात ख़त्म करते हैं। मुझे उम्मीद है कि भूमंडलीकरण से यह कभी न कभी संभव बन सकेगा।

❒ ❒ ❒

चिट्ठी आयी है

❒ पत्रिका का नया अंक मिला। हम सब को इस पर गर्व है कि हम भारत में— कमाल है, भारत में पढ़े जाते हैं, और इसका श्रेय हम आपको देंगे।

-**मारियान्ने ग्रूबर,** अध्यक्ष, आस्ट्रियन सोसाइटी फ़ॉर लिटरेचर, विएना

❒ आपकी लोकप्रिय पत्रिका **'सार-संसार'** की प्राप्ति पर अत्यंत प्रसन्नता हुई। इसकी दसवीं वर्षगाँठ के अवसर पर मैं आपको बधाई देता हूँ। अभी तक आपने जितने स्विस लेखक प्रकाशित किये हैं, उनकी संख्या से मैं बहुत प्रभावित हुआ हूँ। उम्मीद करता हूँ कि आगे भी इसी तरह काम करते रहेंगे।

-**ओलाफ़ क्येल्सन**, मिनिस्टर, स्विस दूतावास, नयी दिल्ली

❒ **'सार-संसार'** के नये अंक में जिस तरह पत्रिका की प्रशंसा की गयी है, उसके लिए मैं तुम्हें बधाई देता हूँ।

-**गोट्टफ्रीड विस्स**, भूतपूर्व प्रशासक, गेर्लाफ्रिंगन

❒ प्रति अभी-अभी मिली है, बहुत कुछ पढ़ा है मैंने इसमें, क्योंकि अपवाद के तौर पर आधी पत्रिका में जर्मन लिखी है, जिससे मैं जान पाया हूँ कि कितने ही भले लोगों ने आपकी पत्रिका की प्रशंसा की है, और आप इसके पात्र भी हैं।

-**कार्ल मार्कुस गाउस**, लेखक, ज़ाल्त्सबुर्ग

❒ **'सार-संसार'** पत्रिका मिली। सचमुच लाजवाब पत्रिका है। ऐसी पत्रिका का मुझे कब से इंतज़ार था, जब मिली तो बहुत ही प्रसन्नता हुई। क्या इस पत्रिका में भारतीय साहित्य को भी स्थान मिलता है? वैसे इसके माध्यम से नये पाश्चात्य साहित्य की जानकारी मिलती है। साथ ही नवीन विचारों से भी युद्ध करने का मौक़ा मिलता है।

-**डॉ. राधाकृष्ण विश्वकर्मा,** बारगढ़

❒ **'सार-संसार'** के प्रकाशन के सतत प्रकाशन के दस वर्ष पूर्ण होने पर मेरी हार्दिक बधाइयाँ। विदेशी भाषाओं के साहित्य को हिंदी में उपलब्ध कराने वाली यह अपने ढंग की अद्वितीय पत्रिका है। हमारे देश की किसी अन्य भाषा में ऐसी पत्रिका का सर्वथा अभाव है। हिंदी पाठकों के लिए यह गौरव की बात है और मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि मैं हिंदी जानता हूँ। पत्रिका में किसी रचना के अनुवाद के साथ उसका हिंदी लिप्यांतरण दिया जाए तो और भी अच्छा होगा। मेरे पास **'सार-संसार'** के प्रथम वर्ष का एक अंक सुरक्षित रखा हुआ है। वार्षिक ग्राहक बनना पसंद करूँगा।

-**चांदराम बंजारे,** कोरबा

❒ आपका काम अनुसंशनीय है, जिसके लिए मैं बधाई देना चाहता हूँ।

-**प्रो. एम.एस. कुशवाहा**, लखनऊ

❒ **'सार-संसार'** के ग्याहरवें वर्ष में प्रवेश पर आपको बधाई देता हूँ। यह बहुत ही कष्टप्रद कार्य है, पर आपकी निष्ठा और समर्पण देखकर यह विश्वास पुन: दृढ़ होता है कि बड़े कार्य इसी प्रकार अकेले चलने से ही होते हैं। आप अनुवाद के द्वारा देशों को जोड़ रहे हैं तथा हिंदी का भण्डार भर रहे हैं। यह अनुवाद ही है जो विभिन्न भाषा-भाषियों को एक मंच पर लाता है और वैश्विक अनुराग की रचना करता है। पत्रिका भारत को विश्व के देशों से जोड़ती है और नयी-नयी संवेदनाओं से अवगत कराती है। इस महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्य के लिए आपका अभिनंदन।

-**डॉ. कमल किशोर गोयनका**, दिल्ली

❒ स्लोवाकी साहित्य पर केंद्रित **'सार-संसार'** का नया अंक हिंदी के लिए मील का पत्थर है। विश्व साहित्य से हिंदी का जुड़ाव एक महती उपलब्धि है। संपादकीय में आपने स्लोवाक साहित्य की विशद व्याख्या सार रूप में प्रस्तुत कर उपकार किया है। स्विस लेखिका से आपकी बातचीत प्रभावी है। 'हेलेना', 'वायु', 'बग़ीचा', 'पृथ्वी गोल है', 'बिल्ली का बच्चा', 'नदी के द्वीप पर' आदि स्लोवाक कथाएँ रोचक एवं जानकारीपूर्ण हैं। स्डेंका बेक्केरोवा की लंबी रचना 'हेलेना' भी रोचक है। अंत में सेफ़ लाइकेत्र एवं आद्रियान तुरीन की कविताएँ भी जीवन का सत्य उजागर करती हैं। तुरीन ने सर्दी का सजीव चित्रण किया है। आपकी पत्रिका विश्व साहित्य का सारांश प्रस्तुत कर वास्तव में **'सार-संसार'** नाम को सार्थक कर रही है। पुन: बधाई।

-**मदन मोहन उपेंद्र,** मथुरा

❒ जनवरी-मार्च अंक आपने स्लोवाक साहित्य विशेषांक के रूप में प्रस्तुत कर एक सार्थक प्रयोग किया है, इसके माध्यम से हिंदी पाठकों को तुलना करने का एक अच्छा अवसर मिलेगा। आप इसी तरह गतिमान रहें, यही कामना करता हूँ।

-**डॉ. राजेंद्र परदेसी**, लखनऊ

❒ मैंने आपकी वेबसाइट देखी है। आपने जो लिखा है मैं उससे पूर्णतया: सहमत हूँ। हिंदी पाठकों को अंग्रेज़ी अनुवादों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, और जर्मन से सीधे हिंदी में अनुवाद ही उसका सही समाधान है। आपके इस अभियान में मेरा समर्थन सदा आपके साथ रहेगा।

-पीटर ज़ेवित्स, कवि, भूतपूर्व निदेशक, माक्स म्युल्लर भवन, कलिम्पोंग

❒ मुझे आपकी पत्रिका की प्रति एक मित्र से मिली है और मैं आपके कार्य की प्रशंसा करती हूँ। इसे पढ़ना एक अच्छा अनुभव था। एक कवयित्री और लेखिका के रूप में मुझे व्यक्तिगत रूप में इस पत्रिका से बहुत ज्ञान मिला है।

-गीता डोगत, दैनिक जागरण, जालंधर

❒ अच्छा लगा देख कर कि आपको अपने शुभचिंतकों से कितनी शुभकामनाएँ मिली हैं। इनमें से कइयों को मैं जानता हूँ। उम्मीद करता हूँ कि आपकी पत्रिका आगे भी ऐसे ही फलती-फूलती रहेगी।

-प्रो. मानफ्रेड डीकर्स, ओल्डनबुर्ग यूनिवर्सिटी, जर्मनी

❒ **'सार-संसार'** का जनवरी-मार्च, 2006 विशेषांक प्राप्त हुआ। पूरा विशेषांक स्लोवाकी साहित्य पर केंद्रित है। आपकी पत्रिका के माध्यम से हिंदी के पाठकों को विश्व की अन्य भाषाओं के साहित्य की अमूल्य सामग्री मिल रही है। मुझ जैसे पाठकों को तो इससे असंख्य लाभ होता है। लिखने और पढ़ने की प्रेरणा मिलती है। इस अंक में भी मारिया बातोरोवा की कहानी 'गुलाबी फूलों वाला पेड़' है। कथ्य और शैली दोनों दृष्टियों से कहानी उत्तम है। मारिया जी बड़ी संवेदनशील लेखिका हैं और मानव-मन के संवेदों की सूक्ष्म से सूक्ष्म पकड़ रखती हैं।

आपकी पत्रिका की नीति है कि विश्व की विभिन्न भाषाओं के सीधे हिंदी में अनुवाद प्रकाशित करेंगे, उनके अंग्रेज़ी के अनुवादों के हिंदी अनुवाद नहीं। यहाँ तक तो ठीक है। क्योंकि मूलभाषा से हुए रूपांतर प्रामाणिक होते हैं और मूल के निकट भी। किसी अन्य भाषा से किये हुए अनुवादों में मूल कवि की आत्मा के स्पष्ट दर्शन नहीं होते। पर आपने विश्व की अन्य भाषाओं फ्रेंच, जर्मन, स्पैनिश, हंगेरियन, चेक, रशियन आदि से जहाँ सीधे अनुवाद छापे हैं, वहाँ अंग्रेज़ी कवियों या लेखकों के हिंदी में होने वाले सीधे अनुवाद पर क्यों प्रतिबंध लगा रखा है। शायद इसलिए कि कई अन्य पत्रिकाएँ यह कार्य कर रही हैं। पर अंग्रेज़ी में भी जो कुछ अच्छा है, वह पाठकों तक पहुँचता हो, आवश्यक नहीं।

-भागवतप्रसाद मिश्र 'नियाज़', अहमदाबाद

क्व मो र्व
देवियों का पुनर्जन्म

क्षणभण्गुर सब कुछ
केवल है एक शून्य;
अपर्याप्त है जो भी
बनता है एक वृत्तांत;
अनिर्वचनीय है जो भी
पाता है एक आकार;
नारीत्व है जो अमर
करता है पथ प्रदर्शन हमारा।

-गेटे

पु चौ पहाड़ के मध्य एक दरार। दर्रा ऊर्ध्वोन्मुख। नैसर्गिक छटा का कैसा जादू! दर्रे के दोनों तरफ़ भव्य प्रासाद के प्रवेश द्वार की मीनारों सादृश्य उत्तुंग शिखर। दर्रे के पार आकाश की ऊँचाई को छूता सागर का अपार विस्तार। दर्रे के सामने की समतल ज़मीन पर मणि सदृश घास तृणों पर बिखरे हुए फल। दर्रे के दोनों तरफ़ चट्टानों पर अनगिनत देवी निलय प्रतिस्थापित हैं। हर देवी निलय में नग्न देवी की प्रतिभा है। अपने हाथों में कई प्रकार के वाद्य यंत्रों को संजोए हुए देवियाँ वादन मुद्रा में।

पहाड़ पर खजूर के वृक्ष की तरह अद्‌भुत क़िस्म के वृक्ष हैं। इन वृक्षों की पत्तियाँ खजूर के वृक्ष की पत्तियों की तरह हैं। आकार में बड़े सुवर्ण फूल स्वर्णाभूषणों पर जड़े हुए वेशक़ीमती पत्थरों की तरह हैं, आकार में बड़े फल आड़ू की तरह हैं। पहाड़ की चोटी पर छाये घने धुँधले बादलों से आकाश ढका हुआ है।

प्राचीनकाल। कुङ् कुङ् और छवाङ् श्यू का राजा बनने के लिए संघर्ष का दिन। तिमिराच्छादित।

पर्दा उठने पर कुछ समय तक सन्नाटा छाये रहने के बाद सुदूर से चिल्लाने की आवाज़ गूँजती है।

देवियाँ अपने वाद्य यंत्रों को यथा स्थान रखकर देवी निलयों से नीचे उतरती हुई चारों ओर दृष्यावलोकन करती हैं।

पहली देवी—

पंचरंगी शैल पिघल कर जब
भर गयी थी दरार स्वर्ग की,
हो गया था तिमिर का आधा अंत
ग्रहमंडल के उस पार;
सुनहली इस धरती पर,
हो गयी थी मौन संगीत की झंकार।
इंदु न जाने हुआ था कितनी बार पुर्णेन्दु,
झंकृत कर ज्योत्सना से जीवन का संगीत।

दूसरी देवी—

लेकिन सुर हमारा आज का,
क्यों नहीं है श्रुति मधुर?
डर हमें इस ब्रह्माण्ड में,
फिर कौन-सा विध्वंस!-
सुनो! कैसी चीत्कार,
व्योम को छूता कैसा कर्णनाद!
प्रचण्ड लहरें समुंदर की या है यह वात चक्र व्योम का?
या है यह अनिष्टकर चीत्कार?

तीसरी देवी—
किन बर्बर जनों का गिरोह
गुज़र रहा है पु चौ पहाड़ से?
जा रहे हैं कहते हैं किसी आधिपत्य के लिए...
ओह, कौन-सा विप्लव!
बहिनो मेरी क्या करें अब हम?
स्वर्ग है जो हमारा सुसज्जित पंचरंगी शैल से, खंड-खंड होगा वही-भूकंप से!

सो रहा है सूर्य भी आसमाँ में श्रांत,
बिखेरता नहीं है दाहक रश्मियाँ।

पहली देवी—
प्रस्थान कर रचना करूँगी एक नव ज्योति की,
चाहत नहीं अब देवी बनकर देवी-निलय में रहने की।
दूसरी देवी—
प्रस्थान कर रचना करूँगी एक नव ताप का,
समा कर तुम्हारी नव रचना ज्योति में।
तीसरी देवी—
बहिनो मेरी, नवनिर्मित मधु
रख नहीं सकते पुराने पात्र में अब।
नव ताप और नव ज्योति को समेटे तुम्हारी,
चाहत मेरी रचना करूँगी एक नव सूर्य की!
देवियों का समवेत गान—
प्रस्थान कर अब रचना करेंगी नव सूर्य की हम,
रह नहीं सकती फिर अब मूर्तिवत इन देवी-निलयों में।

सभी देवियाँ पहाड़ के पार समुद्र में विलीन हो जाती हैं।
पहाड़ के पीछे युद्धरत राजाओं का रणनाद।
छ्वान् श्यू—
आदेश मिला है स्वर्ग का मुझको,
हुआ हूँ नियुक्त मैं स्वर्ग द्वारा विशेष राज करने के लिए धरती पर,
कुङ्-कुङ् मत दो न्यौता मृत्यु-देव को क्यों फंसते हो उसके जाल में,
बनने दो मुझको राजा हो जाने दो पदासीन!
कुङ् कुङ्
भू का पता नहीं है मुझको नहीं पता अंबर का,
राजा बनकर मुझको मनोरथ पूरा करना है।
मृत्यु-देव की बात अगर है तो मृत्यु-देव हूँ मैं भी,
अभिलाषा क्या नहीं जीने की ओह मेरे बूढ़े छ्वान्?
छ्वान श्यू—
पुरखों ने कहा है— सूर्य हो नहीं सकते अंबर में दो, हो सकते नहीं-
राजा प्रजा के भी दो।
फिर चाहते क्यों तुम प्रतिद्वंद्विता?
कुंङ् कुंङ्—
पुरखों ने कहा है— राजा हो नहीं सकते प्रजा के दो, हो सकते नहीं-
सूर्य अंबर में भी दो।
फिर चाहते क्यों तुम प्रतिशोध?
छ्वान श्यू—
ओह तुम तो एक — गूँज पहाड़ की!

कुङ् कुङ्—
इच्छा अपनी शांत करूँगा मनोवेग राजा बनकर!
छ्वान श्यू—
कौन-सी तृष्णा तुम्हें सताती राजा बनने की?
कुङ् कुङ्—
जाओ सूर्य से पूछो तुम — क्यों हो द्युतिमान्?
छ्वान श्यू—
आओ फिर देखें कौन बलवान!
कुङ् कुङ्—
अच्छा तो आओ फिर देखें कौन बलवान।
जन समूह की चीत्कार—
युद्ध! युद्ध! युद्ध!
चीख़ें मार-काट की, खनखनाहट अस्त्र-शस्त्रों की, झड़ी ख़ून के फुहारों की, धड़म-धड़ाम धराशायी होते मानवीय शरीरों का, धमधमाहट धरती को रौंधते पैरो की।
बूढ़ा किसान — (हल को थामे रणभूमि को पार करता हुआ)
सूख चुका है रक्त मेरे हृदय का,
फिर कैसा यह संग्राम भरे खेतों के बीच।
निर्मल होगा कब जल पीली नदी का?
मानव जीवन का होगा कब अंत?
गड़ेरिया — (अपनी भेड़ों को हांकते हुए रणभूमि को पार करता हुआ)
ओह! नहीं पालना था इन लड़ते कुत्तों को,
लड़ते रहे जो सदा रोटी के टुकड़ों पर,
हो गयी जब ख़त्म रोटी जुट गये भेड़ों पर,
भागना ही पड़ेगा मुझे भेड़ों को लेकर।
जंगली लोगों का झुंड — (शस्त्रों सहित दूसरी ओर से रणभूमि को - पार करते हुए)
अवसर का लाभ उठाकर आओ मौज मनायें,
पर्वत के पीछे जाकर कूदें हम भी संग्राम में।
प्रचण्ड वायु के वेग से दब जाता है कमज़ोर,
हम को ही होगा लाभ जो भी हो विजयी रण में!
पहाड़ के पार से ''छ्वान श्यू अमर रहे। सम्राट अमर रहे!'' की आवाज़। खनखनाते अस्त्रों और धरती को रौंदती पद-चापों की आवाज़। स्पर्द्धा की चीत्कार —— ''विश्वासघातियो! कहाँ भागना चाहते हो तुम? स्वर्ग ढहने वाला है।''
कुङ् कुङ् — (अपने अनुचरों सहित पहाड़ के उस पार से छलांग लगाते हुए। बाल बिखरे। गोदने से अलंकृत शरीर। शरीर का अधोभाग केले के पत्तों से ढका हुआ। पूरे शरीर पर घावों के निशान। कांस्य खड्ग और पत्थर के अस्त्र-शस्त्रों से टपकता हुआ ताज़ा रक्त।)
आह! ऐसा तिरस्कार! तिरस्कार!
कितना तिरस्कृत हुआ हूँ मैं बुरी तरह हारकर!
चाहिए अब खोपड़ी उस चांडाल की
तराश कर बनाऊँगा अपना सुरा पात्र! (अपने अस्त्रों पर लगे रक्त को चाटते हुए, भयंकर क्रोधित मुद्रा में)
यह है स्वर्ग का उत्तरी स्तंभ, पु चौ पहाड़,
मेरा जीवन भी हो गया है इसी पहाड़ की तरह एक दरार।
अनुचरो मेरे! बन नहीं सकता मैं राजा,
लेकिन छोड़ूँगा नहीं उस चांडाल को!
आश्रित रहकर मुझ पर लड़ते रहे तुम लोग,
जीवनदान करो अब मुझको इसकी मुझे ज़रूरत है।

सभी अनुचर ज़मीन पर बिखरे फलों को उठाकर खाते हैं।

कुङ् कुङ्—

आह! भूख का देवता कराह रहा है मेरे पेट में!
जादुई फल इस पु चौ पहाड़ के कहते हैं खा ले कोई तो कभी- न होगा श्रांत।
कुछ पल अभी बाक़ी हैं जब होगा ध्वस्त ब्रह्माण्ड,
पूरे भर लो अपने पेट क्या है इसमें नुक़सान।

तीव्र होती स्पर्द्धा की चीत्कार।

कुङ् कुङ् —

समुद्र की प्रचण्ड लहरों का ज्वार है दुश्मनों की चीत्कार,
भग्नपोत यह हमारा डूब जाएगा असहाय!
अनुचरो मेरे, न्योछावर कर अपने शीश दे दो तुम मुझको उधार!
लुढ़का दो उत्तरी स्तंभ को! ध्वस्त कर दो उसे आज!

सेना पहाड़ी दर्रे की ओर बढ़ती है। चारो तरफ़ भयंकर गड़गड़ाहट, कड़कड़ाहट की गूँज। थोड़ी देर में बिजली की कड़कड़ाहट से पहाड़ खंड-खंड हो जाता है। स्वर्ग की मेहराबी छत टूटकर नीचे गिर जाती है। चारों तरफ़ अंधकार का आतंक फैल जाता है। कुङ् कुङ् के अनुचर पहाड़ की गोद में मृत धराशायी हो जाते हैं।

छ्वान श्यू—

(नग्न शरीर, बिखरे हुए बाल, बनावट वन मानुष की तरह। अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित सेना का नेतृत्व करते हुए रणभूमि से गुज़रते हुए।)

राजद्रोहियो! भाग कर जाओगे कहाँ?
ओह स्वर्ग...हो रहा है क्या यह?
उड़ रहें हैं पत्थर चल रही हैं चट्टाने, काँप रही है धरती, फट रहे हैं- पहाड़,

आ..ह..आ....ह..आ..हा..आ..ह..! क़यामत! क़यामत! है क्या यह सब कुछ ?.

गड़गड़ाहट, कड़कड़ाहट और अधिक तेज़ हो जाती है। बिजली की चकाचौंध में कुङ् कुङ्, छ्वान श्यू सहित अनुचरों के शरीर ज़मीन पर बिखरे हुए हैं। कुछ समय बाद गड़गड़ाहट और कड़कड़ाहट ख़त्म हो जाती है। पूरे मंच पर अंधकार छाया हुआ है। पाँच मिनट तक सब कुछ शांत।

दूर से पानी में तैरने की आवाज़ सुनाई दे रही है।

अंधकार में स्त्रियों की आवाज़—

— थम गया है वज्रनिर्घोष!
— तड़ित झंझा का हो गया है अंत!
— ख़त्म हो गया है प्रकाश और अंधकार का युद्ध!
— लेकिन श्रांत सूर्य?
— विवश हट गया है आसमाँ से!
— नष्ट हो गया है क्या स्वर्ग?
— क्या फिर हो गया है आतंक उस अँधेरे का जिसे खदेड़ दिया था?
— कैसे करेंगे पुन: निर्माण खंडित हो चुके स्वर्ग का?
— क्या फिर करना पड़ेगा जीर्णोद्धार पंचरंगी शिलाओं से?
— किंतु नहीं रही काम की अब पंचरंगी चीज़!
— जीर्णोद्धार कर नहीं सकती उसे अब हम!
— करेंगी प्रतीक्षा नव रचित सूर्य के उदित होने की,
— जगत वाह्य और आंतरिक स्वर्ग का होगा आलोकित!
— लेकिन न रही काम की ग्रहमंडल की सीमाएँ भी अब!
— नव रचित सूर्य क्या पुन: होगा परिश्रांत?
— रचना कर नव ज्योति और नव ताप की अर्पित करेंगी हम उसे सदा!
— ओह, चारों तरफ़ पैरों तले हैं पुरुषों के शरीर!

— फिर क्या करेंगी हम?
— कर दें उन्हें क्या मूर्तिवत देवी निहायों में!
— क्या बुरा है कहें उनको करें वह भी मौन संगीत को झंकृत!
— नच रचित सूर्य, बड़ी बहिन, हुआ क्यों नहीं अभी उदित?
— अंगार इतनी तेज़ उसकी, डर कि स्वत: होगा विस्फोट; है गोते लगाता समुंदर में!
— आह। ओजस्विता की यह अनुभूति!
— हृदय हमारा, स्वर्ण मत्स्य लाल, तैरती पारदर्शी पात्र में!
— आकांक्षा है आलिंगन करने की सब कुछ!
— आओ न्योता दें नव रचित सूर्य को गाकर गीत!
समवेत गान—

सूर्य यद्यपि है बहुत दूर,
सूर्य यद्यपि है बहुत दूर,
महासगार में सुनाई दे रहा है गूँजता प्रभात का घण्टानाद
टन टन, टन टन, टन टन

भेदेंगे हज़ारों स्वर्ण बाण लुब्धक पर
कर रहा है विलाप लुब्धक अंधकार में
महासागर में सुनायी दे रहा है गूँजता मृत्यु-घण्टानाद
टन टन , टन टन, टन टन

है अभिलाषा पीयेंगे हम मधुपात्र,
अमरत्व हो प्राप्त नव सूर्य को इन्हीं शुभकामनाओं के साथ,
महासागर में सुनायी दे रहा है गूँजता मधु का घण्टानाद :
टन टन, टन टन, टन टन

मंच एकाएक ज्योतिर्मय हो जाता है। केवल एक सफ़ेद पर्दा दिखायी देता है। सूत्रधार प्रवेश करते हैं।

सूत्रधार- (श्रोतागणों को अभिवादन करते हुए)

सज्जनो! आप लोग इस दुर्गंधपूर्ण अंधकारमय संसार में रहते हुए थक चुके होंगे। निश्चित ही आप लोग एक नव ज्योति के लिए तरस रहे होंगे! इस गीति नाट्य के कवि ने यहाँ तक रचना कर क़लम रख दी है। वह वास्तव में नव ज्योति एवं नव उर्जस्विता की रचना हेतु सागर के पार प्रस्थान कर चुके हैं। सज्जनो, क्या आप लोग नवजात सूर्य को उदित होते देखना चाहते हो? या कृत संकल्प हो स्वत: रचना करने के लिए। फिर मिलेंगे हम नव सूर्य के उदय होने पर।

टिप्पणी— इस नाटक की सामग्री निम्न लिखित स्रोतों से ली गयी है—

स्वर्ग एवं पृथ्वी भी भौतिक (पदार्थ) हैं। अत: भौतिक (घटनाओं) में अपूर्णता हो सकती है। इसीलिए प्राचीनकाल में न्यू वा ने पंचरंगी शिलाओं से स्वर्ग की दरार को भर दिया और कछुए के पैरों से स्वर्ग के चार स्तंभों को निर्मित किया। तदनंतर कुङ् कुङ् और छ्वान श्यू का राजा बनने हेतु संघर्ष हुआ। क्रोधित होकर कुङ् कुङ् ने अपने को ही पु चौ पहाड़ पर पटक दिया। उसने स्वर्ग के स्तंभों को तोड़ डाला और चतुष्कोणीय पृथ्वी के संतुलन को गड़बड़ कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि आकाश उत्तर-पश्चिम की ओर झुक गया। इसीलिए सूर्य, चाँद और तारे अब उसी दिशा में गतिमान हैं। पृथ्वी दक्षिण पूर्व की ओर झुकने से सभी जल-धाराओं का निर्गम उसी दिशा में होता है।

(ल्ये च. थाङ् वन् फ़्येन्)

न्यू वा प्राचीनकालीन देवी है। सृष्टि की सभी चीज़ों की रचना उसी के द्वारा हुई है। उसने सबसे पहले वेणु की रचना की।

(ष्व वन्)

पु चौ पहाड़ के उत्तर की ओर छु पी पहाड़ है। थोड़ी दूर पर ही रवे चुङ् पहाड़ है, पूर्व की ओर यू लवणकच्छ (फु छाङ् हाय्) है। यही पर ह्वाङ् ह अपने उद्गम स्थल से प्रवाहित होकर भूमिगत हो जाती है। इसी जगह पर आड़ू की तरह स्वादिष्ट फल हैं, पत्तियाँ बेर की पत्तियों की तरह और लाल पुटचक्र के पीले फूल हैं। इन फलों को खाने के बाद थकान नहीं होती है।

(षान् हाय् चिङ्, स्च छ् सान् चिङ्)

मृत्यु का प्रलोभन

(एक)
छोटी छुरी है मेरे पास एक
मुस्कारती है खिड़की से मेरी ओर।
मुस्कराती वह कहती है मुझसे :
मो र्व, दु:खी न होओ तुम!
जल्दी आकर कर लो चुंबन मेरे मुख का,
कर दूँगी मैं आकर अंत तुम्हारी कई चिंताओं का।

(दो)
प्रशांत नील खिड़की के बाहर
न्यौता मुझ को बारंबार।
कहती वह मुझ से :
मो र्वो, दु:खी न होओ तुम!
जल्दी आकर समा जाओ मेरी बाहों में तुम,
कर दूँगी मैं आकर अंत तुम्हारी कई चिंताओं का।

मानस दीप

न ठहरता झंझावात,
हट गया आसमाँ से सूर्य,
बुझ गया मस्तिष्क का दीप प्रदीप्त।
कोयले की भट्टी का एक कोयला हाय, असहाय!

आसमाँ का सूर्य, मस्तिष्क का दीप प्रदीप्त,
निगम के विद्युत प्रकाश की तरह :
है अनगिनत वर्त्ति-शक्ति सूर्य की, हूँ मैं पाँच वर्त्ति-शक्ति,
हो कितनी भी वर्त्ति-शक्ति, होते दोनों एक साथ प्रदीप्त।

लौटकर छुट्टी बिता सोता हूँ मैदानी घास में समुद्र-तट के पास,
जलधि नील आसमाँ नील, घन घटा-घोर देदीप्यमान, दुर्बल घास स्वर्णमयी उदास।
है शोर लहरों का? या सरसराहट घास की?
अनवरत शोर : फैलो उजाले की ओर!

कई पतंगे उड़ रही हैं आसमाँ में उन्मुक्त,
हो चाह जैसे इन पतंगों को भी सूर्य की :
डर कहीं छूटें न पीछे होड़ आगे बढ़ने की,
अनवरत प्रयास, उड़ती मैदान, चढ़ती आसमान

और फिर केवल एक शक्तिशाली उड़ता बाज़ मंडरा रहा है मेरे सिर के ऊपर,
उसके चमकीले डैने, रुक-रुक पुन: फड़फड़ाता डैने,
आया है वह उड़कर आलोक से, उड़ रहा है फिर आलोक की ओर,
मैं सोचने लगा अपने मानस के मंडराते अमरपक्षी को।

स्वर्ग श्वान

मैं हूँ एक स्वर्ग श्वान !
निगल जाऊँगा मैं चाँद को,
निगल जाऊँगा मैं सूर्य को,
निगल जाऊँगा मैं समस्त खगोलीय पिंडों को,
निगल जाऊँगा मैं संपूर्ण ब्रह्माण्ड को।
मैं मैं हूँ !

मैं चंद्रमा का प्रकाश हूँ,
मैं सूर्य का प्रकाश हूँ,
मैं समस्त खगोलीय पिंडों का प्रकाश हूँ,
मैं एक्स-किरण का प्रकाश हूँ,
मैं संपूर्ण ब्रह्माण्ड की ऊर्जा का संपूर्ण परिमाण हूँ !

तीव्र गति से दौड़ता हूँ मैं,
बेतहाशा चीख़ता हूँ मैं,
सुलगता हूँ मैं।
सुलग रहा हूँ मैं प्रचंड ज्वाला की तरह !
उन्मत्त चीख़ रहा हूँ मैं समुद्र की तरह !
प्रवाहित हो रहा हूँ मैं विद्युत की तरह !
मैं प्रवाहमय,
मैं प्रवाहमय,
मैं प्रवाहमय,

छीलता हूँ मैं अपनी चमड़ी,
भक्षण करता हूँ मैं अपना मांस,
साँस खींचता हूँ मैं अपने लहू से,
कुतरता हूँ मैं अपने हृदय को,
दौड़ता हूँ मैं अपने स्नायुओं में,
दौड़ता हूँ मैं अपनी सुषुम्ना में,
दौड़ता हूँ मैं अपने मस्तिष्क में।
मैं मैं हूँ !
विस्फोटित हो रहा है मेरा मैं।

वसुंधरा, मेरी माँ!

वसुंधरा, मेरी माँ!
पौ फट चुकी है,
तुम अपने वक्षस्थल पर चिपके बच्चे को जगाओ,
कुलबुला रहा हूँ मैं अभी तुम्हारी पीठ पर।

वसुंधरा, मेरी माँ!
थाम रखती हो तुम मुझे अपने कंधों पर ताकि करूँ विचरण आनंदधाम में।
तुम अभी भी उसी समुंदर में,
सुना कर संगीत, देती सांत्वना मेरी आत्मा को।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मेरा विगत, वर्तमान, भविष्य,
रोटी भी तुम्हीं, वस्त्र भी तुम्हीं, आवास भी तुम्हीं,

अक्रृण होऊँगा कैसे मैं तुम्हारे अगाध स्नेह से?

वसुंधरा, मेरी माँ!
आज से नहीं चाहूँगा मैं क़ैद रखना अपने को घर पर,
चाहता हूँ मैं अक्सर इस उन्मुक्त हवा में,
तुम्हारे प्रति, पूरा करूँ अपना कर्तव्य।

वसुंधरा, मेरी माँ!
प्रशंसक हूँ मैं तुम्हारे कर्त्तव्यनिष्ठ पुत्रों का, खेतों के किसान,
पोषक हैं जो संपूर्ण मानव जाति के,
हमेशा ही दिया है स्नेह तुमने उनको।

वसुंधरा, मेरी माँ!
प्रशंसक हूँ मैं तुम्हारे परमप्रिय पुत्रों का, खानों के मज़दूर,
प्रोमिथियस हैं वो संपूर्ण मानव जाति के,
हमेशा ही दिया है आसरा अपनी बाहों का तुमने उनको।

वसुंधरा, मेरी माँ!
प्रशंसक हूँ मैं संपूर्ण वनस्पति-जगत का, अपने देश भाइयों का, तुम्हारी संतति,
जो उन्मुक्तता, स्वावलंबन, स्वेच्छा, ओजस्विता से,
आनंद उठाते हैं अपनी ज़िंदगी का जो मिली है उनको।

वसुंधरा, मेरी माँ!
प्रशंसक हूँ मैं सभी जीव-जंतुओं का, विशेष रूप से केंचुआ——
प्रशंसक नहीं हूँ मैं केवल आकाश में उड़ती चिड़ियों का :
जो तुम से बहुत दूर उड़ती है आकाश में।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं नहीं उड़ना चाहता आकाश में,
मैं नहीं बैठना चाहता छकड़े और घोड़े पर भी, मौजे और जूते भी नहीं पहनना चाहता,
इच्छा है मेरी केवल नंगे पाँव चलने की, ताकि हमेशा रह सकूँ तुम्हारे करीब।

वसुंधरा, मेरी माँ!
तुम मेरे अस्तित्व की साक्षी हो,
मैं विश्वास नहीं करता कि तुम केवल एक मोहभ्रम हो,
मैं विश्वास नहीं करता कि मैं अल्पबुद्धि और विवेकहीन हूँ।

वसुंधरा, मेरी माँ!
हम सब खुङ् साङ् से जन्मे इ इन् हैं,
मैं विश्वास नहीं करता कि धुँधले स्वर्ग में,
कोई जनक हैं।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं मानता हूँ कि इस ब्रह्माण्ड का सर्वस्व तुम्हारा ही मूर्त रूप है :
तड़ित-झंझा तुम्हारी साँसों का ही पराक्रम है,
बर्फ़ और वर्षा तुम्हारे रक्त का ही संचरण है।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं मानता हूँ कि आकाश का वह मेहराबी छत्र, तुम्हारे साज-शृंगार का दर्पण है,
दिन का सूर्य और रात का चंद्रमा,
उसी दर्पण में तुम्हारा ही प्रतिबिंब है।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं मानता हूँ कि आकाश में विद्यमान सभी तारे,
हम सभी प्राणि-मात्र की चक्षुओं का ही प्रतिबिंब हैं,
मैं तो सिर्फ़ विश्वास करता हूँ कि तुम ही मेरे अस्तित्व की साक्षी हो।

वसुंधरा, मेरी माँ!
एक अबोध बालक की तरह था मेरा विगत,
मैं केवल जानता था तुम्हारे अगाध स्नेह का उपभोग करना,
मैं नहीं जानता था तुम्हारे अगाध स्नेह को, नहीं जानता था/
कैसे अक्रृण होऊंगा तुम्हारे अगाध स्नेह से।

वसुंधरा, मेरी माँ!
अब पता है मुझे तुम्हारे अगाध स्नेह का,
मैं पीता हूँ एक गिलास पानी, चाहे हो बौछार भी स्वर्ग से बारिश की,
मैं जानता हूँ वह तुम्हारा ही दूध है, मेरे जीवन का पोषक द्रव्य।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं सुनता हूँ जो भी आवाज़ या हँसी,
मैं जानता हूँ वह तुम्हारा ही गीत है,
विशेष रूप से मेरी आत्मा की सांत्वना के लिए।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मेरी आँखों के सामने है जो निरंतर गतिशील,
मैं जानता हूँ वह तुम्हारा ही नृत्य है,
विशेष रूप से मेरी आत्मा की सांत्वना के लिए।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मैं महसूस करता हूँ हर ख़ुशबू और रंग,
मैं जानता हूँ दिये हैं तुम ने ही मुझे वे खिलौने,
विशेष रूप से मेरी आत्मा की सांत्वना के लिए।

वसुंधरा, मेरी माँ!
मेरी आत्मा तुम्हारी ही आत्मा है,
मैं चाहता हूँ परिष्कार करना अपनी आत्मा का,
तुम्हारे अगाध स्नेह का क़र्ज़ चुकाने के लिए।

वसुंधरा, मेरी माँ!
अब से मैं चाहता हूँ ऋण चुकाना तुम्हारे आगाध स्नेह का,
मैं जानता हूँ तुम मुझे प्यार करती हो और चाहती हो रहूँ मैं कर्मरत,
मैं चाहता हूँ सीखना तुम्हारी कर्मनिष्ठता से, अनवरत है जो।

ज्योति का सागर

प्रकृति उसीम,
बन गयी है ज्योति का सागर।
सर्वत्र है जीवन की ज्योति तरंग,
सर्वत्र है नव स्फूर्ति,
सर्वत्र है काव्य,
सर्वत्र है हँसी :
हँसता समुद्र भी,
हँसते पहाड़ भी,
सूर्य भी हँसता,
पृथ्वी भी हँसती,
मैं और आ ह, मेरा सुकुमार
हँसते दोनों इस हर्ष में।

मणि सदृश-हरित फ़र् का पेड़,
हँसकर करता इशारे हम को।
रजत पत्रक सदृश बालू,
हँसते हुए देती है निमंत्रण हमको आलिंगन का।
आ गये हैं हम।
करो आलिंगन अतिशीघ्र तुम!
हम चाहते हैं तुम्हारे वक्ष स्थल में,
आतप स्नान!

स्कूल के बच्चों की एक टोली,
बालू में उछल-कूद करते :
फेंकता एक मुठ्ठी भर बालू,
दूसरा फेंक देता उस पर हँसी एक;
पहला फिर दूसरे को धकेल कर गिरा देता बालू में,
दूसरा फिर पहले को धकेल कर गिरा देता बालू में।
पहुँच गया मैं अपने अतीत के लड़कपन में।

पंद्रह साल पहले मैं भी,
तुम्हारी ही तरह था एक बच्चा,
रहता था मैं छिङ् इ नदी तट के च्या चौ में,
रहता था मैं चृ ल पहाड़ की गोदी में बसे स्कूल में।
चृ ल पहाड़ के तले मेरा स्कूल!
तुम्हारा रेतीला प्रांगण ही था मेरा पालना,
क्या है अभी भी उतनी ही दीप्ति?
ओह! था मेरा एक सहपाठी तब,
सुना कि मर गया इस वर्ष!

मेरे अनन्य अंतरंग मित्र!
फु ल्यु की तरह मनोहर,
अभी भी मेरी आँखों में बसी,
तुम्हारी मुक्त आत्मा,
उल्लसित हँस रही है क्या अभी भी मेरे क़रीब?
तुम्हारी आत्मा शरीर का त्याग करते समय,
पुकारा तुमने अपने समुद्र पार के अंतरंग मित्र को,
कितने आँसू बहाये तुमने?....

ओह! प्रस्तर निर्मित वह उत्कृष्ट आलोक-गृह,
चमक रहा है समुद्र में,
चाहता है आ ह चढ़ूं मैं,
चढ़ गये ऊपर हम दोनों।
ओह! सुलग रहे हैं पहाड़,
रजत-नृत्य तरंगों में,
पाल-नावों की कतार,
फिसल रही हो जैसे आईनें में,
ओह! श्वेत मेघ भी घुमड़ रहे हैं आईने में,
क्या नहीं है यह जीवन की ही तस्वीर!

आ ह, नीला आकाश कहाँ है?
इशारा करता वह आसमानी विस्तार की ओर।
आ ह, धरती कहाँ है?
इशारा करता वह समुद्र के द्वीपों की ओर।
आ ह, तुम्हारे पिता कहाँ हैं?
इशारा करता वह आसमान में उड़ती चिड़िया की ओर।

ओह! तो मैं हूँ वह उड़ती चिड़िया!
मैं हूँ वह उड़ती चिड़िया!
चाहूँगा मैं प्रतिस्पर्धा करना श्वेत मेघों से,
चाहूँगा मैं प्रतिस्पर्धा करना चमकती पाल-नावों के साथ।
देखो तुम हम दोनों में से कौन उड़ेगा सबसे ऊँचा?
देखो तुम हम दोनों में से कौन भागेगा सब से तेज़?

शू थिङ्
आइरिस का फूल- गाता है गीत जो

मेरी व्यथा क्यों कि तुमने प्रदीप्त किया आरोहित करने के लिए एक क्षीण प्रभा मंडल को—

(1)
तुम्हारे दिल के सामने
मैं तो हूँ अब एक आइरिस का फूल-गाता है गीत जो
एक बहार बहली हुई तुम्हारी साँसों की ठंडी हवा से
कल-कल-छल-छल करती ज्योत्सना के तले

अपनी विस्तीर्ण हथेली की छाया से
कुछ ही दिन सही
ढक लीजिए मुझे।

(2)
क्या मैं अब सपने संजो सकती हूँ?
हिमाच्छादित धरती। सघन बन
प्राचीन मंदिरों की घंटियाँ और झुके हुए बौद्ध मठ

क्या चाह कर सकती हूँ मैं एक असली क्रिसमस वृक्ष की?
ढका है जो
स्केटिंग शू, रहस्यमयी बाँसुरी और परियों की कहानियों से

आतिशबाज़ी और झरनों की तरह मस्त-मस्त संगीत
क्या दौड़ सकती हूँ गलियों में हँसते-हँसते मैं?

(3)
मेरी वह छोटी टोकरी
मेरे खेतों में खरीफ की फसल
मेरी वह पुरानी पानी की गगरी
ओह! थकी प्यासी दोपहर के बाद आराम करती छज्जे के नीचे मैं
इठलाती हुई तितलियाँ कभी नहीं पकड़ी जो मैंने
मेरा अंग्रेज़ी का अभ्यास : आइ लव यु लव यु
पथ-प्रकाश के नीचे मेरी वह छाया
और अनगिनत
बहाये और फिर घूंट लिये आँसू

और भी
और भी

मुझे मत पूछो
क्यों सपनों में धीरे-धीरे करवटें बदलती हूँ
विगत स्मृतियाँ दीवार के कोने में छिपे झींगुर की तरह
मंद स्वर में लगातार झीं झीं की ध्वनि करता

(4)
मुझे एक शांत सपना देखने दीजिए
मुझे मत छोड़िए
उन तंग गलियों में
कितने सालों तक चल चुके हैं हम

मुझे चैन से एक सपना देखने दीजिए
मुझे सतर्क मत कीजिए
कौओं के उस ठहरते झुंड पर ध्यान न दीजिए
बशर्ते कि तुम्हारी आँखों में एक भी काला बादल न हो

मुझे एक अनोखा सपना देखने दीजिए
मुझ पर हँसना मत
मैं चाहती हूँ हरियाली की तरह हर दिन तुम्हारी कविताओं में खो जाना
और फिर चमकीले लाल रंग की तरह हर शाम लौट जाना तुम्हारे पास

मुझे एक उन्मादी सपना देखने दीजिए
माफ़ करना मुझे और मेरी निरंकुशता को सहन करना
जब मैं कहती हूँ : तुम मेरे हो! तुम मेरे हो
परमप्रिय, मुझे दोष मत देना.....
मैं तो तरसती रहूँगी
उमंग से उमड़ती असीम लहरों में
हज़ार बार तुम्हें आप्लावित करने के लिए

(5)
जब हम एक-दूसरे के बहुत ही क़रीब होते हैं
एक त्वरित गति से चंद्रलोक जानेवाली रेलगाड़ी की सवारी करते जैसे
दुनिया में एक कर्णभेदी आवाज़ कहीं पीछे खो जाती है
समय का उन्मत्त चक्र
बर्फ़ की सरकती हुई चट्टान की तरह

जब हम ख़ामोश निहारते हैं एक-दूसरे को
आत्मा पेंटिंग के एक खुले मैदान की तरह
भँवर की तरह सूर्य का प्रकाश
आकर्षित करता है हम को और अधिक गहराइयों में जाने के लिए
निस्तब्ध, समृद्ध, सद्भावपूर्ण

(6)
इसी तरह
हाथ मिलाये हुए अँधेरे में बैठे
उन पुरानी और नयी आवाज़ों को सुनते हुए
जो हमारे दिलों के आर-पार गूँजती है

यदि एक सम्राट भी दरवाज़ा खटखटायेगा
तुम्हें ज़रूरत नहीं है ध्यान देने की
लेकिन.....

(7)
ठहरो! वो क्या है? कौन-सी आवाज़
जगाती है मेरी शिराओं के लोहित रक्त को
जब मैं भौचक्का होती हूँ
ओह! सुदूर में उमड़ता समुद्र
वह क्या है? किसकी चाह
जो कि मेरे शरीर और आत्मा के चक्षुओं को एक साथ खोलती है
''तुम हर दिन चौराहे पर
मेरे साथ आना''

(8)
छतरी की तरह स्वप्न
फु कुङ् इङ् की तरह....
चारों तरफ़ पहाड़

(9)
ओ मेरी भावनाओं में बसे प्लॅम
तुम बढ़ते मिटते
लौट जाओ अपने तूफ़ानी और बरसाती पहाड़ों की ओर
मत डोलो फूलदान में

ओ मेरे सहज स्वभाव में विचरण करते हंस
यदि तुम गोली के घावों से भी घायल होते हो
तो फिर बढ़ते जाना शीत ऋतु की ओर जिसका प्रतिरोध नहीं हो सका
मत करना चाह छोड़ देने की जंगले के बसंत के दृष्य को

फिर भी, मेरा नाम और मेरी निष्ठा
इसी वक़्त पीछा करते हुए पहुँचेगी
देश का प्रतिनिधित्व करते एकल प्रतियोगिता के रिकॉर्ड में
मुझे अधिकार नहीं है आराम करने का
ज़िंदगी की तेज़ दौड़
कोई अंत नहीं, केवल एक रफ़्तार

(10)
भविष्य में
एक आसमां बनाते हुए
मैं धैर्य से देखती हूँ

ओ हवा तुम मुझे बहा ले जा सकती हो
लेकिन फिर भी मैं अपने दिल के लिए
स्वीकार करूँगी एक अभागिनी के अधिकार

(11)
प्रियतम, अपनी मशाल उठाओ
मुझे रास्ता दिखाओ

मुझे अपनी कविता के साथ दूर-दूर तक जड़ें ज़माने दीजिए
आदर्शों की घड़ी तालाब के पीछे टिक-टिक की आवाज़ कर रही है,/
रात कितनी शांत है
गाँव और शहर मेरी बाहों को घेरे हैं, चिमनी का प्रकाश टिमटिमा रहा है
मुझे अपनी कविता के साथ-साथ लगातार चलने दीजिए
राहें मुड़-मुड़ कर पुकार रही हैं : नहीं कर सकते हो पार
झरनों से सजी-संवरी धरती ने मार्ग-निर्देशक को फूलों के लिए भेंट कर दिया है।

(12)
मैं शहर की गलियों से गुज़री, बढ़ी सार्वजनिक स्थल की ओर
मैं कद्दू के खेतों में गयी, जौ के खेतों से गुज़री, खो गयी उजाड़ में
ज़िंदगी लगातार मुझे ढालती जाती है
एक तरफ़ बंधन, दूसरी तरफ़ फूल
फिर भी कोई नहीं जानता
मैं ही तुम्हारी वह मूर्ख लड़की हूँ जो कि अंक गणित में बहुत कमज़ोर है
कोई बात नहीं कि समय का चक्र किस तरह मेरी आवाज़ को गुंजित करेगा
तुम अभी तक भी मेरी उस लाजवाब आवाज़ को पहचान लेते हो

(13)
मैं दृढ़ता से खड़ी हूँ
निर्भीक, स्वाभिमानी, यौवन से भरपूर
दु:ख-दर्द का तूफ़ान दिल में संजोये
सूर्य मेरे सामने
मेरी त्वचा चमकलीली पारदर्शी
मेरे केश घने सजे-संवरे

चीन मेरी माँ!
तुम्हारी आवाज़ को सुनते बच्चे
फिर से नया नाम दो

(14)
तुम मुझे अपनी पौध कहो
तुम्हारे आसमान के सितारे, माँ
यदि गोलियाँ बरसती हैं
तो पहले मुझको ही भेदना
मैं मुस्कराती हूँ, आँखों की तेज़ रोशनी
माँ की भौंहों से धीरे-धीरे ओझल हो जाती है

रोओ मत, पुष्पो और पादपो
रक्त, तुम्हारी लहरों में धधक रहा है

(15)
उस वक़्त, प्रियतम
तुम दु:खी मत होना
यद्यपि पुन: कोई भी नहीं होगा
हलके रंग के वस्त्र की चाह करने वाला
बारिश की तरह झींगुर की आवाज़ से गूँजती गलियाँ पार
करते
तुम्हारे रंगीन काँच की खिड़कियों को खटखटाने वाला
यद्यपि पुन: कोई भी शरारती हाथ नहीं होगा
अलार्म घड़ी को छेड़ने वाला
और कहने वाला- अब हम अपनी-अपनी राह पर
चलें, लौट चलें तुम्हारी राह पर
तुम बेशक़ीमती पत्थर पर
मत गढ़ना मेरी सरल प्रतिमा
और न ही साथ देना अकेले गिटार का
कलेंडर के हर एक पेज को पीछे की ओर पलटना

(16)
तुम्हारा स्थान
उस झंडे के नीचे है

आदर्श से दु:ख-दर्द गौरव
यह मेरा सहेजा हुआ ज़ैतून का वृक्ष
तुम्हारे लिए
अंतिम वाक्य है

कबूतरों के साथ-साथ मुझे ढूँढने आइये
प्रात:काल मुझे ढूँढने आइये
तुम लोगों के प्यार में
ढूँढ पाओगे मुझे
ढूँढ पाओगे अपनी
आइरिस का फूल-गाता है गीत जो

याङ् मु
मुझे गर्व है कि मेरे पास एक दूरस्थ क्षितिज है
(अपनी दूसरी जन्म भूमि चुन् का अर के लिए)
-याङ् मु

मैं प्राय: सोचता हूँ, इतनी बोझिल ज़िंदगी में एक विशाल छत्र होना चाहिए,
यह विशाल छत्र एक असीम नीला आकाश ही है;
मैं प्राय: सोचता हूँ, इतनी गंभीर ज़िंदगी में एक बड़ा थाल होनी चाहिए,
यह बड़ा थाल धरती की ठोस सतह ही है;
मैं प्राय: सोचता हूँ, आत्मा के प्रासाद में एक खिड़की होनी चाहिए,
यह खिड़की सांसारिकता के तेज चक्षु ही हैं;
मैं प्राय: सोचता हूँ, ज़िंदगी की नाव में एक लंबी रस्सी होनी चाहिए,
यह लंबी रस्सी दूरस्थ क्षितिज ही है...

मुझे मिल गया। अपनी परम प्रिय मातृभूमि चुन् का अर से ;
अपनी ललक से, अपने विवेक से।
उन झिलमिलाती धुँधली काल्पनिक रेखाओं से,
आकाश और धरती के बीच कई उतार-चढ़ावों में।
मेघ और ग्वाल गीत जिन्हें मैं कभी भी नहीं त्यागना चाहूँगा,
लीक और लंबा रास्ता, पिच्छक की तरह जिसे मैं कभी भी नहीं त्यागना चाहूंगा
यदि क्षितिज के सतही हिम शिखर, हो खाली पाल नाव की तरह,
मुझे सोचने दो अंतहीन सागर की दूरस्थ सीमा को!

मेरी समृद्ध वैभवशाली मातृभूमि चुन् का अर,
तुमने मुझे कितनी उत्कृष्ट और शानदार कला प्रदर्शनियाँ दीं!
बालू।धूल।हवा। कोहरा...
शक्तिशाली निरंकुश राज्यों के 'शाही ताज' भी यही बालू थी हवा से उड़ती हुई!
लेकिन जब पहला ताज टूट कर गिर पड़ा इस इतिहास के खंडहर पर,
मैंने देखा। काँपती हुई मृतक आत्माओं की आस्थियाँ उदास।
उस समय की धरती और आकाश एक हिंसक पशु के भीमकाय मुख की तरह,
-क्षितिज, कई हज़ार वर्षों की मृत्यु का कगार....

काली बालू। काली धूल। काली हवा। काला कोहरा
इस साध्वी धरती पर उग्र।
मैंने देखा है। देखा है वह उन्मादी समय;
देखा है आतंक, देखी है महाविपदा।
लेकिन जब बेइंसाफ़ी और दुष्टता फु कुङ् इङ् की तरह हवा का /
प्रतिरोध करते हुए- प्रसार करता है,
मैंने भी विशाल मरुस्थल की भोर और गोधूलि से एक अजीब-सा/
संशय महसूस किया है।
मुझे याद है उस समय था स्वर्ग-नर्क के बीच एक कारावास रक्तरंजित,
-क्षितिज, की बेड़ियां बिखेरता श्यामलता....

लेकिन इन सबने चुन् का अर का गला नहीं घोंटा।
वास्तव में नहीं। देखो तुम रसोईघरों की चिमनियों से उड़ता हुआ धुँआ।
देखो तुम उन खेतों को, देखो कितने मनोहर हरे-भरे हैं खेत;
देखो तुम उस झील के पानी को, देखो कितना गूढ़ नमोनील है झील का पानी।
प्रकृति के झंझावात ने सुनहले शरत के पथ को अवरुद्ध नहीं किया,
कृत्रिम झंझावात ने भी हरियाली पर विजय प्राप्त नहीं की।
क्षितिज—ग्रीष्म ऋतु में उत्तेजित करता है एक युवती की शालीनता,
-गहन प्यार करता है काल के चक्र को!

कितना बदल गया है यहाँ। वास्तव में सब कुछ बदल गया है।
देखो तुम उस नर्सरी को। देखो तुम उस फलोद्यान को।
देखो तुम उस वन-खंड को, उस सघनता से मिली गहराई;
देखो तुम उस खाई को, सौंदर्यता से प्रतिदीप्त केंद्र बिंदु की ओर।
जैसे कि सचमुच झेल चुकी हो इतिहास की तंग गली,
तभी तो लोग अत्यधिक प्यार करते हैं सरलता और समता;
तभी तो लोगों ने खोजा कि ब्रह्माण्ड ने तोड़े आदर्शों के कपाट,
-क्षितिज, प्रलोभक द्वारा आलिंगन किया हुआ एक ज्योतिचक्र!...

बीहड़ रास्ते, छीना मुझसे मेरा कितना बहुमूल्य समय,
मैं ख़ुश हुआ, अंतत: छीन लिया मुझसे अगम्य और सरल;
रेगिस्तान की हवा, निगल गयी मेरा सारा सुख,
मैंने सांत्वना दी अपने मन को : निगल गया अपना कायरपन और उदासी।
इसीलिए प्यार किया है मैंने खुलेपन और उदारता को,
इसीलिए प्यार किया है मैंने अर्थों और व्यापकता को;
इसीलिए अत्यधिक प्यार करता हूँ मैं चुन् का अर के लोगों के समृद्ध वक्ष स्थलों को,
-हर एक मांसपेशी है एक पर्वत शिखर!

चुन् का अर के लोगों ने शायद और लोगों की तुलना में बहुत कुछ खोया है,
क्योंकि वह सुदूर में है; लेकिन खोया भी है राजसी मोह।
चुन् का अर के लोगों को शायद और लोगों की तुलना में बहुत कम मिला है,
क्योंकि वह सुदूर में है; लेकिन फिर भी मिली है बहुत मुश्किल से सुदूर जगह।
इसीलिए मैं स्पष्टवादिता एवं नवीनता की प्रशंसा करता हूँ,
इसीलिए मैं निर्भीकता और आशावाद का आदर करता हूँ,
इसीलिए मुझे नहीं है विश्वास कि नहीं देख पाऊँगा दूरस्थ बिलकुल स्पष्ट,
-क्योंकि मैं करना चाहता हूँ पृथक कल का सारा दृष्यावलोकन!

कहते हो क्या कि 'कल तो शून्य' है! ज़रूरी नहीं कि मायामय है जो अदृश्य।
जानते हो क्या कि 'जीवन एक स्वप्न' है! सपने देखना भी प्राय: आदर्शों की ओर उन्मुख होना है।
धरती पर तो बहुत ऊबड़-खाबड़ है, (वास्तव में बहुत!)
देखो आकाश से नीचे- क्या नहीं है परिक्रमा करता एक दीर्घवृत्त?
लेकिन धरती तो लोगों के प्रति निष्पक्ष है,
हर जीवन अर्पित करता है एक क्षितिज;
केवल जब तुम चलते हो, दृढ़ता से बढ़ते हो आगे,
भविष्य की धरती और आकाश-नहीं है : अकारण; बल्कि है: असीम!

नहीं निकलते हो छप्परों से, नहीं जानते हो दुनिया का विस्तार!
नहीं जाते हो सरहदों पर, नहीं महसूस करते हो धरती और आकाश की दूरियाँ!
चुन का अर, मैं तुम्हारा धन्यवाद अदा करता हूँ कि तुमने मुझे नयी दृष्टि दी—
करूँ विचरण यदि भविष्य में दुर्गम और उजाड़ घाटियों के छोरों का,
मैं देख सकता हूँ सूर्यास्त के मेघों के कफ़न और प्रभात के गुलाबी मेघों के ताज;
-सूर्यास्त और सूर्योदय हैं मंत्रमुग्ध करते क्षितिज के पास,
-मौत और ज़िंदगी, सब कुछ एक निष्ठा।
मुझे गर्व है कि मेरे पास एक दूरस्थ क्षितिज है!

सद्भावना दर्पण का तेलुगु विशेषांक

- आर. चंद्रशेखर, हैदराबाद

भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद पत्रिकाओं की काफ़ी कमी खलती है। अनुवादों के माध्यम से एक-दूसरे की संस्कृति, रहन-सहन को जानने तथा एक दूसरे के क़रीब आने में काफ़ी मदद मिलती है। इस दिशा में भारतीय एवं विदेशी साहित्य से जुड़ी अनुवाद पत्रिका 'सद्भावना दर्पण' का विशेष महत्व होना अत्यंत सहज बात है। समय-समय पर विविध भाषाओं के विशेषांक निकाल कर पाठकों का उस भाषा विशेष की सांस्कृतिक व साहित्यिक पृष्ठ भूमि से परिचय कराया जा सकता है। इस बार के इस तेलुगु विशेषांक 'सद्भावना दर्पण' (जुलाई, 2005 ई.) द्वारा इसी तरह का सफल प्रयास किया गया है। पत्रिका के आवरण पर ही तेलुगु-पन की स्पष्ट झलक दिखाई देती है। इस पर डॉ. विजयराघव रेड्डी, जो हिंदी व तेलुगु भाषाओं में समान अधिकार रखते हैं और जो ख़ुद एक साहित्यकार और भाषाविद हैं, के हाथ इस विशेषांक के संपादन का कार्य सौंपना बहुत ही उचित सोच है। संपादन की कुशलता इसी बात से झलकती है कि तेलुगु-पन व तेलुगु-संस्कृति/साहित्य को दर्शाने के प्रयास में रेड्डी जी ने कहीं कोई कसर नहीं छोड़ी है। जहाँ औरों से कुछ पहलुओं पर लेख प्राप्त करना शायद संभव नहीं हुआ संपादक ने अपने ख़ुद के क़लम का ज़ोर आज़माया और उस कमी को पूरा करने में सफल रहे। तेलुगु-पन का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी तत्वों को इस छोटे से अंक में समेटने का उन्होंने प्रयास किया है। एक तरफ़ भाषा का प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ साहित्यकारों की रचनाओं को स्थान दिया है तो दूसरी ओर कुछ और साहित्यकारों के बारे में लेख और उनके विचारों को प्रस्तुत किया है, जिनमें आंध्र-प्रदेश के भक्त शिरोमणि त्यागराजु, रामदासु और अन्नमाचार्य जी के साथ-साथ प्रख्यात कवि, लेखक श्री विश्वनाथ सत्यनारायण व ज्ञानपीठ विजेता सी. नारायण रेड्डी जी सम्मिलित हैं। इतना ही नहीं कुछ तेलुगु कहानियों, कविताओं की झलक सक्षम अनुवाद के माध्यम से प्रस्तुत की गयी है (यद्यपि कहानियों के चयन पर थोड़ा और श्रम लगाकर प्रतिनिधि रचनाएँ दी जाती तो यह प्रयास और सार्थक होता)। यहाँ तक कि 'तेलुगु राष्ट्र का गीत' भी अनुवाद के साथ प्रस्तुत करना काफ़ी सराहनीय बात है।

इस के अलावा, बीसवीं शती में तेलुगु कविता, तेलुगु कथा यात्रा पर एक नज़र, हिंदी में तेलुगु कहानी जैसे विश्लेषणात्मक लेखों के द्वारा एक ओर तेलुगु साहित्य की समृद्धि का परिचय दिया गया है तो दूसरी ओर आंध्रप्रदेश के पारिवारिक लोक गीतों में नारी का स्थान, आंध्र का सामाजिक जीवन, तेलुगु सिनेमा एक झाँकी जैसे लेखों से तेलुगु लोक के जीवन-विधान से परिचित होने का मौका मिलता है। तेलुगु अस्मिता से जुड़े चित्रों ने पत्रिका को और भी जीवंत बना दिया है। कुल मिलाकर हिंदी पाठकों के लिए आंध्र या तेलुगु भाषा क्षेत्र को समझने के लिए यह अंक एक अच्छा ज़रिया है। आशा करते हैं कि भविष्य में 'सद्भावना दर्पण' के माध्यम से अन्य भाषा के भी विशेषांक पढ़ने को मिलेंगे।

चौ ति फ़ान
काला सागर के गीत

काला सागर के लिए

मैंने हमेशा सोचा
लाल सागर का पानी लाल रंग का है
और काला सागर
काला है

नहीं, जब हवा मंद-मंद बहती है और मौसम में गरमीं होती है
मैं काला सागर के तट पर घूमता हूँ
सागर की तरंगें जब करती हैं प्रहार हरे शीशे पर
हरित फुहार पारदर्शी
काला सागर नहीं है काला
और जब घुमड़ते हैं काले बादल
अचानक आता है झंझावात
ख़ूबसूरत पारदर्शी सागर
झेलता है अकल्पित विध्वंस
उद्दात लहरें जब प्रहार करती हैं काले रंग की क़ब्र को
लहरें धकेलती हैं शून्य को काले संगमरमर की समाधि पत्थर की तरह
काला सागर हो गया काले रंग का सागर

मैं दुआ माँगता हूँ
काला सागर हो स्वर्णिम सूर्य की तरह कहीं दूर आकाश में
सामुद्रिक गाये गीत अपने

सीपी

समुद्र का ज्वार-भाटा घटने लगा है
समुद्र तट पर केवल हैं
ढेरियाँ कर दी हों जैसे अलग-अलग
छोटी शव पेटी की सफ़ेद सीपी
कई गुच्छे कई ढेरियां मृत आत्मा की श्वेत अस्थियाँ

और पुन: छोटी सीपियों का एक ढेर
पुन: वही रंग समुद्र का
पुन: करते ज़ोर से बंद अपने कवच के छोटे प्रवेश द्वार को
ज़िंदा अभी भी लेकिन है कितना दयनीय डुबोते अपने को
और उसे तो पहले ही भेज दिया गया है क़ब्रगाह में
क्या तीव्र लहरें भेजेंगी उसे वापिस अपने समुंदर में
करती है वह प्रतीक्षा अभी भी

ओ सागर तुमने उसे पाला है
न मरने दो उसे अल्पायु

फु कुङ् इङ्

शरत्कालीन सूर्य
फु कुङ् इङ्
काला सागर के तट की ढलान पर श्वेत केशी
क्या आनंद उठा रहा है सागर की लहरों की शिथिलता का
ओह! श्वेत केशी फु कुङ् इङ्
मेरी ही तरह श्वंत केशी फु कुङ् इङ्

मैंने एक टहनी तोड़ी
एक बच्चे की तरह तोड़कर फेंक दिया उसे
नियति से ही भटकते बीज
उड़ जाते हैं हवा के साथ
शायद साथ निभाने के लिए काला सागर की लहरों का
शायद मूल के मुलायम रेशे
पकड़ेंगे जड़ धरती में जिसे मैंने चूम लिया है।

फु कुङ् इङ् — कुकरौंधा/सिंहपर्णी
-अनुवादक

अभिलाषा

मैं निश्चित ही तुम्हारे साथ
साथ-साथ पहुँचूगा काला सागर के पास
तुम चलना उठाने
काला सागर की सीपी
नदी तट की उस कन्या की तरह
झुकी कमर
सोचती प्रकृति के गूढ़ रहस्य को
आख़िर अंतर है क्या

जब हम बैठते हैं
सागर किनारे बालू में
अपने कान खोले एक-एक सीपी
चुपकर सुनती रहतीं हैं हमारी फुसफुसाहट
तुम्हें निश्चित ही मेरे साथ
जाना है काला सागर के पास
हम बैठेंगे समुद्री चट्टान पर
सुनेंगे समुद्री चिड़िया की आवाज़
मैं करूँगा चिंतन-मनन
काला सागर की चिड़िया की बोली को
पो हाय् से
आख़िर भिन्न है क्या
नहीं
अंतर समझने की कोई ज़रूरत नहीं
अकेले गीत गाना कितना नीरस है
वे हँसते रहते हैं, मुझ पर कि मैं अकेले ही आता-जाता रहता हूँ

रात होने पर
जब देखता हूँ खिड़की खोलकर
सागर की उफनती लहरों की लोरी
से जाता हूँ एक स्वप्निल दुनियाँ में
हम साथ-साथ बैठते हैं काला सागर के पास
मैं कहता हूँ— काला सागर काला नहीं है
तुम कहती हो— पो हाय् की लहरें हैं हरित जेड़
दो सागर
लहरा उठेंगें
और हम दोनों
करेंगे आलिंगन

चाङ् ख च्या
ओह! श्याङ् याङ् झील-
मैं तुम्हें तहे दिल से प्यार करता हूँ

मेरी जन्मभूमि है जान् तुङ्,
दूसरी जन्मभूमि है पेइ चिङ्।
नहीं रख सकता मैं गुप्त
अपने दिल का अनुराग :
वो तो हमेशा ही तहेदिल से करता है प्यार
च्याङ् नान् के श्येन् निङ् को।
श्याङ् याङ् झील के किनारे,
मैं केवल रहा तीन साल,
लेकिन फिर भी है मुझे
छाङ् च्याङ् की तरह ही आत्मीय लगाव।
वो थी हमारा काडर स्कूल,
मेरी नयीं ज़िंदगी
वहीं लिया जन्म।

श्येन् निङ्,
तू रात-दिन मेरे दिल को आकर्षित करती है,
ओह! तेरी याद—
जैसे कि पुष्पा और पादप खोजते हैं ज़मीन अपने जड़ की,
जैसे कि मछलियाँ खोजती हैं नदी और तालाब,
जैसे कि घर से दूर बच्चा,
याद करता है अपनी माँ को।
तुम्हीं ने सिखाया मुझे
शारीरिक श्रम के साथ ही मानसिक श्रम का उपयोग,
पार्टी के कार्यक्रम की स्पष्ट समझ;

तुम्हीं ने सिखाया मुझे
बेलचा चलाना और क़लम उठाना
एक ही तरह का हुनर;
तुम्हीं ने सिखाया मुझे
जानता हूँ खाते हैं जिस चावल को
किस तरह उगाया जाता है;
तुम्हीं ने सिखाया मुझे
ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर
समतल भूमि पर चलने की तरह;
तुम्हीं ने सिखायी मुझे
जन साधारण की भाषा
कम्यून के ग़रीब किसानों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संघर्ष करना,
सोये हम साथ-साथ, सपने भी बुने एक साथ
सोये हम कितनी मीठी नींद, कितनी गहरी नींद...

भीषण गर्मी में पसीने की बूदें लगती थीं मोती सदृश,
ठंडी हवा ही थी बिजली का पंखा;
कड़ाके की सर्दी में ठंडी हवा के थपेड़ों से जूझना,
हिम कणों का मुँह में टपकना था कितना शीतल कितना मधुर।
वसंत ऋतु में धान के पौध रोपना,
कितना अच्छा स्वाद होता था बहते साफ़ पानी का,
शस्योत्सव में कितने व्यस्त,
कितना भाता था सामूहिक नृतज्य-गान फसल काटते हुए।
दिन लगते थे जब बहुत छोटे,
करते थे आमंत्रण चाँद का सूर्य की जगह।
कपड़े धूल और पसीने से लथ-पथ
हर दिन धोते थे एक बार
पैर गोबर और गौ-मूत्र से सने
सने रहते थे हमेशा;
दोनों हाथ कड़ी मेहनत से
हो गये थे कितने मज़बूत,
हर किसी के काले थे चेहरे,
लेकिन कंधे थे मज़बूत।
सोचते थे हम वर्ग-संघर्ष,
संधोशनवाद का करते थे विरोध;
धान की पौध कितनी बड़ी हो गयी?
तरकारी की पौधों को कितनी और ज़रूरत है पानी की?
चिंता होती थी आसमान है साफ़ या बादलों से घिरा हुआ,
लेकिन होती थी बहुत कम अपनी परवाह।
मध्यमवर्गीय मानसिकता,
धीरे-धीरे हुई लुप्त,
सर्वहारा वर्ग की विचारधारा का
शनै: शनै: हुआ आविर्भाव।
पुन: नहीं सोचा कभी भी
''मैं, मैं, केवल मैं....'',
केवल माना हमने ख़ुद को
लड़ाकू जल्थे का एक सदस्य।
क्या होता है दु:ख?
क्या होता है सुख?
अतीत की परिभाषाएँ,
किया हमनें फ़ैसला विपरीत।
पुस्तकें पढ़ीं कई साल,
लिखा हमने तब तक जब तक कि दृष्टि न हुई धूमिल;
आज तलवार की तरह क़लम का प्रयोग कर
लिखी समालोचना कई हज़ार शब्द,
आज धरती पर कुदाली का प्रयोग कर
लिखे उत्कृष्ट लेख कई हज़ार शब्द,
और फिर समझा
क्रांतिकारी व्यवहार के सिद्धांत का विशिष्ट महत्व,
तभी धीरे-धीरे समझ पाये
क्या है अध्यक्ष माओ का 'क्रांति' का कार्यक्रम।
कभी न भूले—

समालोचना और सुधार, पगडंडी गुज़रती है जो खेतों के बीच,
आवाज़ जिससे हिल जाती है धरती, ग़ुस्सा जिससे काँप जाता है आकाश,
कितने तोड़े पाय् माव् हाथों से!
कभी न भूले—
पुराने समाज के ज़ुल्मों का इज़हार करने की सभा में ग़रीब किसानों के भाषण
रुदन हवा का और विलाप वर्षा का, रोते ख़ून के आँसू!
निगलते पुराने समाज की विपदाओं के स्मरण के भोजन का स्वाद,
कभी न पलटने दें सामंतों और पूंजीपतियों को अपना आकाश!
कभी न भूले—
हर दिन सुबह, अध्ययन का समय,
गोल घेरा बना बैठे ज़मीन में, घिरे हुए हरित वृक्षों से,
लाल किताब के पृष्ठ, स्वर्णिम उत्कृष्ट,
अरुणता दिलों में, शीत में सूर्योन्मुख।
भयंकर गर्मियों की शाम, वापिस लौटते मेहनत कर,
वाचनालय में मेज़ घिरी होती थी चारों ओर से,
एक हाथ से भगाते मच्छरों को, दूसरे हाथ से पोंछते पसीना,
गंभीरता से करते अध्ययन अध्यक्ष माओ की रचनाओं का...
श्रम,
करते समृद्ध विचारधारा को,
श्रम,
केवल अनाज के उत्पादन में वृद्धि के लिए ही नहीं।
अतीत के सहकर्मी हमारे,
केवल जानते आत्म सम्मान,
कई तरह के पत्थर किये जिन से नाले पार
कर दिया जुदा बहुत दूर पार;
तीन साल का संग्राम—
कई दिन कई रात,
तीन साल का श्रम—
पूरे दिन और रात।
बहाया पसीना एक साथ, समालोचना भी एक साथ,
खाना खाया एक साथ, सोये भी एक साथ,
तन-मन एक साथ, सुख-दु:ख में भी एक साथ,
मिल जुलकर हम एक साथ, संबंध हमारे कितने आत्मीय!
जब कभी भी एक साथी
छोड़ता था सेना,
चाहे था वह बीस-तीस साल का नौजवान,
या अनुभवी लौह-पुरुष,
न सह सकते थे बिछोह,
बिलकुल भी न झेल पाते थे बिछोह!
न कहो अलविदा
कठिन रास्तों पर चलने के जुझारु संकल्प,
न कहो अलविदा
हमें सिखाने वाले कम्यून के ग़रीब किसानों,
न कहो अलविदा
दोस्त की तरह हँसिया हथौड़ो,
न कहो अलविदा
अपने हाथों से निर्मित किये मकान, कितने भव्य आलीशान,
न कहो अलविदा

अपने हाथों से उगाये पेड़ फैलाते हैं जो अपनी हरी शाखाओं की छतरी,
न कहो अलविदा
वैभवशाली हरित भूमि,
न कहो अलविदा
खेतों की पगडंडियों से गुज़रते हुए हवा के झोंको,
न कहो अलविदा
काडर स्कूल कर हर एक पादप और पुष्प,
न कहो अलविदा
पुनसत्थित श्याङ् याङ् झील के पहाड़.....

काडर स्कूल! ओह मेरे काडर स्कूल,
तुमने मुझे बदले में एक दिल दिया,
काडर स्कूल! ओह मेरे काडर स्कूल,
तुमने मुझे बदले में चक्षुदान किया।
सांस्कृतिक क्रांति के दस वर्ष,
श्याङ् याङ् झील में तीन वर्ष,
मिली गहन शिक्षा, हुआ कितना अभ्यास,
सफलता के पिछले पचास-साठ साल!
काडर स्कूल! ओह मेरे काडर स्कूल,
जब भी आता है तुम्हारा ख़याल
फूल जाता है सीना मेरा खौलते हुए पानी की तरह,
मेरे परमप्रिय लड़ाकू दोस्तो,
मैं कितने अगाध स्नेह से
याद करता हूँ तुम्हें!

संपादक-मंडल

वसंत गद्रे
जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

बाबली मोइत्रा सराफ़
रामजस कॉलेज, दिल्ली

इंदु मज़लदान
माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली

एस.ए. रहमान
जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

रिज़वानुर रहमान
जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

अख़लाक अहमद 'आहन'
जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

देवेंद्र सिंह रावत
जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली

सार-संसार

विदेशी भाषा साहित्य की त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

मुख्य संपादक : **अमृत मेहता**

महोदय/महोदया,

'**सार-संसार**' नियमित प्राप्त करने के लिए कृपया पत्रिका की सदस्यता ग्रहण करें और निम्नलिखित सदस्यता-प्रपत्र के अनुरूप अपना पूर्ण विवरण भेजें। सदस्यता शुल्क केवल मनीआर्डर या बैंक ड्राफ़्ट द्वारा **अमृत मेहता** के नाम से प्रेषित करें। **-संपादक**

सदस्यता-प्रपत्र

सेवा में,
अमृत मेहता
मुख्य संपादक : '**सार-संसार**'(त्रैमासिक)
7-102/46, लेन नं. 3, साईं एन्क्लेव, हब्शीगुड़ा,
हैदराबाद-500 007 दूरभाष : 27151907 (आवास)

महोदय,

कृपया हमारा निम्नलिखित नाम व पता अपनी डाक सूची में दर्ज करके '**सार-संसार**' डाक द्वारा भिजवाने की व्यवस्था करें।

❒ एक प्रति का मूल्य : 20/- रुपये
❒ एक वर्ष का शुल्क : 80/- रुपये

सहयोग राशि.....रुपये मनीआर्डर/बैंक ड्राफ़्ट संख्या.....
तारीख़.....द्वारा **अमृत मेहता** के नाम से प्रेषित है।
नाम :.....पूरा पता :.....
.....
पिन कोड नंबर :.....फ़ोन नं.....

दिनांक :.....

हस्ताक्षर :

अमृत मेहता

का नया अनुवाद
आस्ट्रियाई साहित्य

भविष्य आज

(कार्ल मार्कुस गाउस के निबंध-संग्रह ''देअर मन, देअर इंस गेफ्रीयरफ़ाख़ वोल्टे'' का मूल जर्मन से अनुवाद)

प्रकाशक : **कृष्णा पब्लिशर्स,4283/3, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-110 002**

मूल्य : **90/- रुपये,** प्रथम संस्करण : **2003**

भारतीय एवं विश्व-साहित्य की
सरस त्रैमासिक पत्रिका अनुवादों के माध्यम से
मनुष्यों को जोड़ने का प्रयास

सदभावना दर्पण

संपादक : **गिरीश 'पंकज'**

संपादकीय पत्राचार : **जी-31, नया पंचशील नगर**
रायपुर-492 001 (म.प्र.)दूरभाष : 0771-427100

एक प्रति का मूल्य : **15/- रुपये**
वार्षिक : 50/- रुपये, आजीवन : 600/- रुपये

इस शताब्दी का बेहतरीन

स्विस-जर्मन साहित्य

1990 से 1994 ई. तक
कार्ल अल्बर्ट लोज़ली से मिलेना मोज़र तक
इस शताब्दी के महानतम स्विस-जर्मन साहित्यकारों माक्स फ्रिश,
फ्रीडरिष ड्युरनमाट, अडोल्फ़ मुश्ग, पीटर बिकसल की रचनाओं
का
अनूठा संग्रह
हिंदी में उपलब्ध

अनुवादक :

अमृत मेहता

विश्व-साहित्य को हिंदी के पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने का
अनुपम प्रयास
सजिल्द संस्करण : 267 पृष्ठ
मूल्य : 295 रुपये

संपर्क करें :

कृष्णा पब्लिशर्स

4283/3, अंसारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002

Edited, Published and Printed by : **Amrit Mehta**, 4283/3, Ansari Road, Darya Gunj, New Delhi-110002 and Printed at Raja Offset Printers, Laxmi Nagar, Delhi-110092

हाइनरिष ब्योल, कार्लोस फ़ुएंतेस, नजीब महफ़ूज, अंतोन चेखव, राइनर मारिया रिल्के

इन महान साहित्यकारों की कृतियों का मूल विदेशी भाषा से अनुवाद प्रथम बार भारत में विदेशी-भाषा के मूर्धन्य विद्वानों द्वारा। ऐसा साहित्य, जो अक्सर अन्य किसी भी भाषा में अनूदित होने से पूर्व हिंदी में उपलब्ध।

- उत्तम अनुवाद
- खरा अनुवाद
- मूल भाषा से अनुवाद
- आधुनिकतम साहित्य का अनुवाद
- विभिन्न संस्कृतियों की गहरी जानकारी रखनेवाले विदेशी-भाषा-साहित्य के विशेषज्ञों द्वारा अनुवाद।

विदेशी भाषाओं के साहित्य को आपकी मातृभाषा में प्रस्तुत करनेवाली अनूठी पत्रिका।

सार-संसार

पेरेस्त्रोइका के बाद का आधुनिक यूरोप।
मनुष्यों की, विशेषकर नारी की स्वतंत्रता उसकी व्यथा में परिवर्तित होती।
एक बेबाक विश्लेषण एक नारी द्वारा...
आस्ट्रिया की सुप्रसिद्ध लेखिका

स्डेंका बेक्कर

का

नवीनतम कथा-संग्रह

2002 ई. में जर्मन में प्रकाशित **2002 ई. में हिंदी में प्रकाशित**

गुड बाई गलीना

अनुवादक : **अमृत मेहता**

प्रकाशक :

कृष्णा पब्लिशर्स, नयी दिल्ली

पृष्ठ : 160 मूल्य : 95/- रुपये

संपर्क : डॉ. अमृत मेहता
2-99, काकतीय नगर, हब्शीगुड़ा, हैदराबाद-500 007

गीत चाँदनी के प्रकाशन

01. **पंख बोझिल और गीले (कविता-संग्रह): 1989 ई.**
रचयिता : दुलीचंद 'शशि' 40-00

02. **उतर आयी शाम (कविता-संग्रह): 1991 ई.**
रचयिता : ओमप्रकाश निर्मल 50-00

03. **कुहासे की धूप (कविता-संग्रह): 1992 ई.**
रचयिता : नरेंद्र राय 45-00

04. **भूकंप (कविता-संग्रह): 1997 ई.**
रचयिता : जी. राजेंद्र कुमार 90-00

05. **गीत-95** (प्रतिनिधि 100 गीतों का संकलन)अखिल भारतीय गीतकार सम्मेलन (27-28 मई, 1995 ई.) के अवसर पर प्रकाशित।

06. **हैं सरहदें बुला रही : 2000 ई.**
(करगिल युद्ध के दौरान हैदराबाद के कवियों द्वारा लिखी गयी कविताओं का संग्रह) 60-00

07. **अभिनंदन जनकवि दुलीचंद 'शशि' सन् 2002 ई.**

08. **गीत चाँदनी काव्य-यात्रा : 1988**
(हैदराबाद के कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का संकलन) 10-00

09. **गीत चाँदनी काव्य-यात्रा : 1995**
(हैदराबाद के कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का संकलन) 100-00

10. **गीत चाँदनी संस्मारिका-1989**

11. **गीत चाँदनी संस्मारिका-1994**

12. **ओमप्रकाश निर्मल की रोग शय्या पर लिखी कविताएँ : 1992**

13. **फ़ुरसत के पल (काव्य-संग्रह) : 2003 ई.** 100-00
रचयिता : अभिलाख सिंह

14. **कुंठा का ज्वालामुखी (काव्य-संग्रह) : 2003 ई.** 150-00
रचयिता : विद्याप्रकाश कुरील 'फ़र्रुख़ाबादी'

15. **स्मृतियों की परछाइयाँ (काव्य-संग्रह) : 2004 ई.** 100-00
रचयिता : सत्यनारायण शर्मा 'कमल'

16. **महाभारत कश्मीर का** (ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं लघु छंद-संग्रह) 50-00
2004 ई. रचयिता : सत्यनारायण शर्मा 'कमल'

प्राप्ति स्थान : **गीत चाँदनी कार्यालय,** 'कवि भवन', 15-1-503 डी/3,
अशोक मार्केट, सिद्दिअंबर बाज़ार,हैदराबाद-12 मो. : 9246521546, 9246361300